17वीं शताब्दी के युरोपियन 'जेन' कवि, जिनकी
कविताओं ने पूर्व के रहस्यवाद व पश्चिम
के बीच एक पुल का कार्य किया ।

''एन्जिलस सिलिसिअस''
की पुस्तक

अंग्रेजी भाषा में
'फ्रैडिरिक फ्रैंक ' द्वारा अनुवादित कुछ
कविताओं का हिन्दी अनुवाद

गुरु उं

'समय और अनन्तता'

मिलती है मानव देह,
एक अनूठे सौभाग्य से,
हम, जो मानव हैं,
अगर नहीं पाते,
उस 'परम पद' को इस जीवन में,
कब आशा कर सकते हैं
फिर उसको पाने की ! (इचू)

कुछ कार्य युगों से
बुरे समझे जाते हैं,
और अब हमें नजर नहीं आती
उनमें कुछ बुराई,
सदियां लग सकती हैं,
आचरण के नियमों को समझाने में,
अतः यह नादानी होगी
यदि हम चाहें,
तुरन्त स्वीकारोक्ति । (जेन गुत्सु)

स्वर्ग और धरती से भी,
जो पहले है,
आकार रहित और नाम रहित,
दृष्टि से परे,
'मन' या 'बुद्ध' जिसे कहना
सही नहीं होगा,
कल्पना में जो कभी,
हो जाता साकार,
वह 'ताओ'
शब्दों में नहीं किया जा सकता
कभी व्यक्त । (दाई–ओ–कोकुशी)

यहां नहीं,
वहां नहीं,
वह अनन्तता
पर हर पल जाहिर है,
हमारी नजरों के सम्मुख । (सेंगत्सन)

जो परख चुका है,
स्वयं अपनी प्रकृति को,
देख सकता है 'उसे'
जब जी चाहे । (हुई नेंग)

मत मापो अनन्तता को,
प्रकाश वर्ष के बाद वर्षों में,
बस एक ही कदम आगे है
वह रेखा,
जो कहलाती है काल,
शाश्वतता यहीं है ।

वह पुष्प
जो मैं देखता हूं,
अपनी इन पार्थिव आखों से,
शाश्वत रूप से खिलता है,
उस परमात्मा में ।

कितना क्षणभंगुर है यह जग,
फिर भी बना हुआ है,
लुप्त हो जाते हैं हम ही,
और हमारा क्षणिक जीवन ।

यदि स्वयं को खो पाता 'उसमें'
पुनः पा जाता अपना आधार,
जिसने मुझको पाला–पोसा,
इस धरती पर आने से पहले ।

शाश्वतता है काल,
और काल शाश्वत है,
दोनों को अलग देखना,
पागलपन है मन का ।

दो आखें मानव की,
एक देखती है,
क्या हो रहा
तेजी से गुजर रहे समय में,
और दूसरी आंख देखती,
वह जो नित्य है और दिव्य है ।

मैने जाना है
वैभव और प्रसिद्धि को,
महसूस किया है
शर्म और गरीबी को,
वह सब तो लेकिन अस्थयी था,
समय के परे,
पर मैने पाया है
एक अनोखा गौविर और आनन्द ।

कितना लघु है हमारा जीवन,
काश इसे हम समझ सकते,
तब ना शायद हम देते
छोटे से छोटा भी कष्ट
किसी मानव या प्राणी को

समय शून्यता,
इतना हिस्सा है तुम्हारा, मेरा
कि नहीं पा सकते हैं,
हम स्वयं को,
जब तक नहीं है हमें खबर,
अपनी शाश्वतता की ।

समय तुम्हारा खुद का विचार है,
उसकी घड़ी,
टिक–टिक करती है मन में,
जिस क्षण छोड़ दोगे सोचना,
रूक जाएगा समय भी ।

बस एक कदम,
समय के आगे,
'प्रभु' की नित्यता में,
मैं प्रवेश पा जाता,
और पूर्ण रूप से
मुक्त हो जाता,
मानव की क्षणभंगुरता से ।

जिसे हम कहते हैं इतिहास,
उसके अन्त में है,
वह परमेश्वर,
जिसके लिए ना भूतकाल था,
ना होगा कुछ होने को आगे ।

करुणा ही बुद्धिमानी है,
बुद्धिमानी ही करुणा है । (लंकालतारा सुत्र)

'ताओ का,
साझा किया जा सकता है,
'वह'
बांटा नहीं जा सकता ।

जिन्दगी का अर्थ है,
देखना । (हुई नेंग)

जो कुछ जैसा है,
अपने आप में यथार्थतः
जानकर उस गहरे रहस्य को,
छूट जाते हैं हम मोह से,
और अपनी धारणाओं के बंधन से । (सेंगत्सन)

अद्वैतता परम ज्ञान है,
और परम करुणा है,
उस 'एक' को ही,
सब में देखना । (डी. आई. सुजुकी)

यथार्थ के संसार में,
'मैं' नहीं है,
और कुछ भी नहीं है,
'मैं' के सिवाय । (सेंगत्सन)

मन, बुद्ध और जीवित प्राणी,
ये तीनों
कोई अलग–अलग तो नहीं है । (अवातामसका सुत्र)

जब हम देख पाते हैं,
सभी वस्तुऐं
अपने एक ही रुप में
लौट जाते हैं तब हम
अपने मौलिक स्वरुप में
जहां हम हमेशा थे । (सेंगत्सन)

हर एक है करुणा का पात्र
क्योंकि वह मात्र
'कोई' नहीं है । 'एनन्'

ऐसा नहीं है
कि वस्तुऐं भ्रामक हैं,
पर वास्तविकता के आलम में
उनकी पृथकता
केवल भ्रम है । 'एनन्'

बुद्धिमानों की
एक ही हसरत रहती है,
उस समग्रता को,
पूर्णता को जानने की,
लेकिन नासमझ स्वयं को
भटका लेते है
उसके अंशों में
और भूल जाते हैं
मूल आधार को ।

कुछ भी तो नहीं है
निन्दा के योग्य,
क्योंकि वह ईश्वर ही है
सबका निर्माता और रचेता ।

उस परमात्मा को
अभी और यहां,
प्रतिबिम्बित करने के लिए,
मेरा मन होना चाहिए,
संकल्प शून्य, दीप्त और विकार रहित ।

कोई नहीं कह सकता,
कौन और कैसा है,
वह परमात्मा,
रात्रि का अंधकार या
दिन का उजियारा है,
एक है अथवा अनेक,
कुछ है या कुछ भी नहीं,
शायद 'वह' वह है,
जिसे मैं या वे सब,
जो जान चुके हैं,
या जान पाएगें,
केवल'तदरुप' होने पर ही ।

वह परमात्मा है
किसी वृत का केन्द्र
उनके लिए जिन्होंने उसको,
सब और से अंगीकार कर लिया है,
और जो केवल खड़े हैं,
वृत के केन्द्र बिंदू पर,
उनके लिये वह
उस वृत्त की परिधि है ।

सभी कुछ स्थित है,
उस परम पिता में,
करता नहीं जो किसी को भी पृथक,
वह मेरे संग है,
हर प्राणी के संग,
फिर क्या उसकी
कोई अलग अभिव्यक्ति है ।

उसकी आत्मा ही जागृत है
जो जानता है कि वह परमेश्वर,
एक आधार रहित आधार है,
सीमा रहित और आकार रहित ।

वर्षा की एक बूंद ज्यों,
सागर में मिलकर सागर हो जाती,
वैसे ही परम सत्य में मिलकर,
यह आत्मा अनन्त हो जाती ।

जान लिया है जिसने कि
सब एक ही हैं,
एक–दूजे से जुड़े हुए
वही मुक्त है, वही प्रबुद्ध है ।

कैसे कोई मर सकता है
या धुंध सा छट सकता है,
यदि परमेश्वर की सृष्टि,
विद्यमान है सदा उसकी अनन्तताओं में।

अपने अनन्त रूपों में सृष्टि,
लगता है उपजी है,
उस परमेश्वर के खेल से
खेला है जिस खेल को उसने,
एक गहरे चिन्तन में पैठ ।

जीवन की दिव्यता का सन्देश
जिसे आत्मा पढ़ाती है,
उसे परिभाषा देने के सिवाय,
क्या कर सकता है कोई ?

जब तक जज्ब नहीं हो जाती,
द्वैतता अद्वैतता में,
कोई भी मनुष्य नहीं पा सकता
अपना स्वरुप ।

टूटे ठीकरों को जो जोड़ दे,
प्रेम की वह अद्‌भुत शक्ति
मनुष्य की सबसे बड़ी,
आत्मिक उपलब्धि है ।

यदि उस परम पूर्ण को
कहा जाए मुझे समझाने को,
तो मैं खड़ा रह जाउंगा,
निश्चल, निश्शब्द, आवाक,

दरिया में भी डूबके जो,
हाथ फैलाए मांग रहा हो,
पीने का पानी,
क्या हम उसकी तरह नहीं हैं ?

साफ दमकता एक चांद,
पास हमारे है, फिर भी,
हम भटक रहे हैं अंधकार में । 'इक्कयू'

जब कहते थे,
तब मालूम ही क्या था,
अब जाना तो
जुबां बन्द हो गयी । 'लाओत्से'

हमारे स्वीकारने और नकारने से
खिसक जाती है हमारे हाथों से
चीजों की असलियत,
जिसे जानना असंभव नहीं है,
यदि हम छोड़ दें,
चयन करना । (सेंगत्सन)

बेहतर होगा,
'शरीर' को अहं समझना
बजाय मन के
क्योंकि विचार तो
क्षण प्रतिक्षण बदलते रहते हैं,
और शरीर जिन्दा रहता है,
साल, दो साल या सौ साल । ' समयुत्तानिकाटा'

जेन (परमात्मा) के बारे में
जानने को उत्सुक,
एक प्रोफेसर, एक आचार्य (सन्त)से मिले,
आचार्य ने एक प्याले में,
अपने मेहमान के लिए,
चाय डालना शुरु किया,
और डालते ही रहे,
चाय प्याले से बहने लगी, बहती रही,
प्रोफेसर से जब नहीं रुका गया
वे बोले रुकिए,
चाय बाहर गिरी जा रही है,
आचार्य बोले हां सही है,
ठीक तुम्हारी तरह
जब तक तुम लबालब भरे हुए हो
विचारों एवं मान्यताओं से
कोई रास्ता नहीं है
तुम्हें 'जेन' को समझाने का ।

जिसका शान्त चित हो गया,
वह चुप रहे या बतियाए
जाहिर हो जाती है उसकी हकीकत ।

सम्मान, पदक या उपाधियों से,
कोई मानव
महिमा मण्डित नहीं होता
लेकिन उसे जानने से जो वह 'स्वयं' हैं,
जिस उद्‌देश्य से उसको रचा गया है,
वह पूर्णकाम हो जाता है ।

'अहं' नही ंता फिर क्या कारण है,
मानव के सभी कुकृत्यों का ?

'ईसा' के बारे में,
कितना ही भला बोल लो,
'वह' फिर भी दूर है
जब तक उसे तुमने,
अपने अन्तर में नहीं बैठाया ।

कानून की आवश्यकता
केवल दुर्जनों के ही लिए है,
सज्जन तो प्रेम करते हैं सबसे ही,
उस ईश्वरीय श्रद्धा से प्रेरित होकर ।

अपने को चतुर समझकर,
अपने ही अज्ञान से अनभिज्ञ रहना,
गिरने का यही मतलब है ।

ख्वाहिशें दुनियां की,
जब तलक जिन्दा हैं मन में,
सर्व समृद्धशाली होकर भी,
भिखारी ही तो है वह ?

यदि सूर्य की ओर देखकर
मैं अपनी दृष्टि खो दूं,
क्या इसमें दोष प्रकाश का है,
या स्वयं मेरी आखों का ?

मानव,
सबसे बड़ा पेटू है,
जिसकी भूख नहीं मिटती,
समूचे विश्व को निगल जाने पर भी,
हर दम भूखा,
तलाशता रहता है
एक नया ब्रहमाण्ड
अपनी भूख मिटाने को ।

लाभ हानि,लेन–देन,
हमेशा जो इनमें खोया रहता है,
कितना ही धन होने पर भी
वस्तुतः है वह नितान्त निर्धन,
सम्पत्ति का स्वामी होने की जगह
स्वयं सम्पत्ति से ग्रसित ।

सूर्य के प्रखर प्रकाश में,
नहीं रहता
पथभ्रष्ट होने का डर,
लेकिन रात के अंधियारे में,
कितनी आसानी से,
भूल जाते हैं हम डगर ।

आग में हाथ देने वाला,
मूर्ख, दया का पात्र है,
पर उससे कम नही है
दया का पात्र,
वह जो स्वयं को प्रसिद्धि में,
भरमाये रहता है ।

तुम्हारे भले कर्मों से,
ईश्वर को सारोकार नहीं
वह तो देखता है
तुम्हारा कर्म करने का उद्देश्य,
उसे कर्मफल का नहीं,
वरन कर्म के औचित्य का
ख्याल रहता है,
उपरी सतह को छोड़
वह जड़ों को खोदकर देखता है ।

भरे पात्र में,
क्या कोई कुछ भर सकता है ।
अतः 'उसे' पाने के लिए,
मिटाना पड़ता है खुदी को ।

'जन्म और मृत्यु पर'

एक शव के नजदीक,
एक साधक ने आचार्य से पूछा
क्या यह जीवित है ?
या क्या यह मृत है ?
वे बोले,
यह जीवित है, मैं नहीं कहुंगा,
यह मृत है, यही भी नहीं कहुंगा,
आचार्य का यह उत्तर सुन
साधक को तत्त्व–ज्ञान हो गया ।

किससे तुलना की जा सकती है,
मानव जीवन की,
जो एक कौंध सी,
या फिर ओस बिंदू सी,
क्षण भंगुर है,
मिट जाती है, होने से पहले । 'सेनाई'

यदि चाहते हो,
जन्म और मृत्यु के
बंधन से तुम मुक्त होना,
तो पहचानो उसको
जो सुन रहा है,
यहां इस वक्त, इस उपदेश को,
तुम जो यहां बैठे हो,
मुझको देख रहे हो,
वो तत्त्व नहीं हो
जिससे तुम्हारा यह शरीर रचा है,
तुम वह हो जो कर रहा,
इस तन का उपयोग,
इस सत्य को पहचानो
मुक्त हो जाओगे,
चाहे फिर जन्म हो या मृत्यु । 'रिन्जई'

ना तो 'में' मृत्यु को प्राप्त होउंगा
ना 'मैं' कहीं और चला जाउंगा,
'मैं' यहीं रहूंगा,
मत पूछो बस मुझसे कुछ और । 'इक्यु'

जो कुछ तुमने पाया है,
एक दिन सब खो जाएगा
उस दुनिया के साथ–साथ,
अतः पहचानो तुम अपने को,
वह जो है लोकातित ।

क्योंकि वह परमात्मा ही मेरा अन्त है
अतः उसे ही मेरा प्रारम्भ होने दो,
ताकि मैं अभी पूर्णता से जी सकूं,
गिरने, भटकने या भ्रष्ट होने के बजाय ।

प्रेम–और मृत्यु में क्या अन्तर है,
प्रेम नष्ट कर देता है,
स्वरचित अहं को,
और तोड़कर 'मैं' का पिंजरा,
मुक्त कर देता है आत्मा को ।

हानि लाभ या दुःख सुख में,
उद्विग्न नहीं जो होता है,
उसका जीना ही जीना है ।

बुद्धिमान मृत्यु से नही डरते,
वे तो अनेकों बार,
मृत हो चुके होते हैं,
अपने 'अहं' और मिथ्याभिमान के प्रति,
और जीवन के बंधनों के प्रति ।

मृत्यु मुझे नहीं डराती,
वह तो मुझको दिखलाती है
कैसे मुझमें जीत रहा है,
जीवन हर क्षण मृत्यु से ।

मृत्यु, तुम सत्य नही हो,
क्योंकि मैं तो हर पल मरता हूं,
और पूनर्जन्म पाता हूं,
एक अनन्त जीवन में ।

यदि तुम आशा करते हो
परमेश्वर को पृथ्वी पर जन्म देने की,
तो याद रखो 'वह' बाहर से नही आएगा,
'वह' तो मन के भीतर ही अंकुरित होता है,
शाश्वतता के गर्भ में ।

चिरस्थायी शब्द,
हर रोज नए सिरे से,
जन्म लेता है वहां
जहां कोई,
अपने 'अहं' को त्याग देता है ।

'स्वर्ग और नरक'

शाश्वत सत्य,
जब होता है उजागर
यह पृथ्वी ही पवित्र भूमि
यह देह ही पवित्र देह बुद्ध की ।

क्रियाशील है जो सबमें,
पर करता नहीं,
कुछ भी दखलंदाजी,
वह 'ताओ' है ।

सब मन का ही सृजन है,
जैसे कोई चित्रकार
बना दे चित्र,
किसी शैतान, दुष्ट, भयावह जीव का,
और फिर खुद ही डर जाए,
सब उसकी स्वयं की कल्पना थी,
विकृत दिमाग की उपज,
कुछ भी नहीं थी हकीकत ।

क्या होगा अब, इसके बाद,
नहीं सोचते बुद्धिमान,
इसी धरा पर इसिलिए वे,
पाते सुख स्वर्ग समान ।

स्वर्ग का ऐश्वर्य
और नरक की भीषण लपटें,
सभी कुछ अन्तर में है,
अतः सोच समझकर निर्णय लो,
किस पथ पर तुमका बढ़ना है ।

जब तक नहीं तुम खोज पाओगे,
अपने ही भीतर छिपा
स्वर्ग का साम्राज्य,
उसमें प्रवेश पाना,
तब तक मुश्किल है ।

अपने उद्‌गम स्त्रोत से विच्छिन्न,
कोई भी किरण,
चमक नहीं सकती,
ठीक उसी तरह,
अपने भीतर के प्रकाश से विहीन हो,
कोई राह नहीं मिल सकती ।

मत सोचो,
कभी किसी कल को
तुम देख पाओगे उस परमात्मा का प्रकाश,
वह तो अभी यहीं है,
यदि तुम देख सको तो,
वरना भटके रहोगे अंधकार में ।

नहीं देख पाते हम,
सब कार्यों में उस परमपिता का हाथ,
क्योंकि धुंधला दी है हमारी दृष्टि,
एक रेत कण सी,
इस जग ने ।

वह जो निस्पृह है,
दुःख में, सुख में,
उसने पा लिया है
परमात्मा का बख्शा,
सच्चा विवेक ।

क्रोध नरक की ज्वाला है,
जब भी यह भड़क उठता है,
दहकते भभकते अंगारों में,
मानव उंचाई से आ गिरता है ।

जिसका भंडार है परमपिता,
यह धरती ही उसका स्वर्ग है,
फिर उनको क्यों कहें बुद्धिमान,
जिनसे यह धरती नर्क है ।

शाश्वतता का अर्थ है
समय शून्यता,
अन्तहीन समय तो,
बनाता है नरक को नारकीय ।

'प्रार्थना और ध्यान'

क्या कुछ और भी आश्चर्यकारी है,
इस संसार के आश्चर्यों से ? किसी ने पूछा,
हां, आचार्य ने उत्तर दिया,
तुम्हारा उन आश्चर्यों के प्रति जागरूक होना ।

तुम्हारा खजाना तुम्हारे भीतर है,
उसमें वह सब कुछ है,
जो भी तुम्हें चाहिए,
उसे पूर्णतया उपयोग करो
बजाय बाहर भटकने के । 'हूई हाइ'

'ताओ' की रोशनी में देखने पर,
कुछ भी अच्छा या बुरा नहीं है,
सब अपने प्रकाश में,
दिखते हैं यथावत । ' चूआंगशू'

'जेन' का अनुभव
एक अनोखी अनुभूति है,
ना यह प्रतीकात्मक है
ना ही विचारोत्पादक
क्रियाशीलता में 'जेन' का अभ्यास,
निष्क्रियता में अनुभव करने से,
हजार गुना बेहतर है ।

सत्य का अनुभव,
मन में ही हो सकता है,
ध्यान मग्न होने से नहीं ।

मेरी सबसे गहरी प्रार्थना,
जो मैं कभी कर सका हूं,
वह है जिसने मुझे
एकाकार कर दिया,
उस प्रार्थना सुनने वाले से ।

भगवान वैसा ही है,
जैसा वह है,
मैं वैसा ही हूं,
जैसा मुझे होना चाहिए
और फिर भी
मैं नहीं देखता कोई द्वैत ।

कुछ भी नहीं सिवाय,
तुम्हारे व्यर्थ भटकने वाले चंचल मन के,
विघ्न डालता है
जो तुम्हारे ध्यान में ।

वह क्षण,
जिसमें तुम रूक जाते हो,
राह में विश्राम के लिए,
उसी क्षण,
तुम पीछे रह जाते हो,
रास्ते से भटक जाते हो ।

वह परमात्मा,
उपर बैठा सब सुन रहा है,
प्रतिध्वनित हो रही है,
जो हर क्षण,
उसकी ही प्रशंसा,
हर प्राणी की आवाज में ।

यदि तुम कर सको,
स्वयं को शान्त और खाली,
वह परमात्मा भर देगा तुरन्त,
तुम्हें एक अपूर्व पूर्णता से ।

'वह',
शब्दों की परिधि से बाहर है,
अतः मुझे मालूम नहीं,
उसकी प्रार्थना का
कोई और बेहतर तरीका
सिवाय मौन रहने के ।

'वे' जो सौभाग्यशाली हैं,
करते नहीं कुछ और,
सिवाय 'मेरे' और 'तेरे' के
बंधन से उपर उठ जाने के,
और पा जाते हैं इस प्रकार,
शाश्वत रूप से दिव्यता को ।

व्यर्थ बातों में और
व्यर्थ के कामों में,
उलझाए रहते हैं हम अपने को,
और भूल जाते हैं कि
हमारे ही हृदय में है वह सब
जिसकी हमें चाह है
अबाध और संपूर्ण रूप में ।

जिसने अपने विवेक को,
भीतर की ओर मोड़ लिया,
सुन लेता है वह उस अनसुने को,
और देख सकता है उस अनदेखे को ।

'आन्तरिक प्रकाश एवं संसिद्धि'

निपूण पुरुष अपने मन को
दर्पण की तरह इस्तेमाल करते हैं,
वे ना तो कुछ अपनाते हैं,
ना कुछ ठुकराते हैं,
जो पाते हैं जैसा,
वैसा ही उसे लौटा देते हैं । 'चुआंगत्सू'

जितना मैं समझ पाता हूं,
उसे जो 'सत्य' है,
उतना ही भूला जाता हूं,
बुद्धि, विवेक और विवाद को ।

जितना गहरा पैठता हूं,
मैं सत्य की खोज में,
उतना ही कम बातें करता हूं,
क्या देखा क्या महसूस किया ।

अब जब मेरी नजरों ने,
मन का निचोड़ जान लिया,
नहीं शब्द पाता हूं मैं,
जिनमें उसे ब्यान कर सकूं ।

बुद्धि द्वारा ईश्वर को पाना,
शायद सबसे कठिन कार्य है,
उसे पाना तो बस संभव हैं,
केवल हृदय ही के द्वारा
जहां शुरु होती है राह,
मंजिल वहीं पर मिल जाती है ।

हे अकथ्य, हे अज्ञेय,
तुम लगते हो दूसरे छौर से,
लेकिन फिर भी मेरा मानव हृदय,
तुम्हें बसाए हैं संपूर्ण रूप से ।

वह परमात्मा है,
ऐश्वर्य का अक्षय भण्डार,
उसकी बख्शीशें हैं अमापनीय,
चकराता है मेरा मन,
कैसे रखूं यह संग्रह ।

उस सा ही हूं मैं भी महान,
मुझ सा ही लघु वह भी है,
कैसे फिर वह मेरे उपर,
या मैं उसके नीचे हो सकता ।

इच्छांए यूं ही नहीं मरती,
वे फिर भटकाने लगती हैं,
जैसे ही हम अपने अन्तर में,
भुला देते हैं 'उसके' अहसास को ।

क्राइस्ट हजारों बार भी,
यदि जन्म ले ले इस धरा पर,
व्यर्थ है लेकिन फिर भी,
जब तक वह मेरे अन्तर में,
नहीं जन्मता ।
मत खोजो,

परमेश्वर को अन्तरिक्ष में,
वह तो पाया जा सकता है,
केवल तुम्हारे हृदय में,
मिल सकते हो,
जहां तुम उससे आमने–सामने ।

यदि वह है, मुझसे दूर बहुत दूर,
तो फिर कौन,
मेरे दिल की धड़कन में,
देता है आवाज ?

मैं परमेश्वर से नहीं हूं बाहर,
ना ही वह मुझसे बाहर है,
मैं हूं उसकी रोशनी की किरण,
और वह मेरा सूर्य है ।

मेरा ईश्वर मुझसे
जुदा नहीं है,
इसिलिए कया वह,
खुदा नहीं है ?

स्ब जीवों में, निरन्तर प्यार का अहसास
है उस परमात्मा का,
काश की उसकी करूणा और विवेक,
मैं पा सकता ।

कोई भी साक्ष्य या तर्क,
धुंधला नहीं सकते,
उसकी नजरों को,
जिसने पा लिया है,
अपने ही भीतर अनन्त प्रकाश ।

'परमात्मा और स्वयं'

'बुद्धिज्म' का सबसे गहरा तात्पर्य,
क्या है पूछा किसी ने,
और उत्तर में आचार्य ने
सिर्फ बहुत अधिक झुककर,
उसे प्रणाम किया ।

मैं जहां भी हूं,
'उससे' मिलता हूं,
क्योंकि 'वह' मेरे अलावा,
कुछ और नहीं है,
फिर भी मैं, 'वह' नहीं हूं । 'दोसान'

'गौतम' और 'स्मिदा' भी
मनव ही तो थे,
फिर क्या मेरा चेहरा,
मानवों का नहीं है ? 'इक्यू'

मैं भी भगवान सा ही धनी हूं,
प्रत्येक रजकण पर,
उसके साथ साथ ही,
मेरा भी अधिकार है ।

यदि तुम शांत निश्चल होकर,
बन्द कर दो 'उसे' खोजना,
तुरन्त पा जाओगे उसे,
अपनी अनन्त गहराइयों में ।

मेरा हृदय भी,
उसे पा सकता है
यदि वह भी गुलाब की तरह,
प्रकाश की ओर,
रुख करना सीख ले ।

भगवान के लिए,
बाहर मत चिल्लाओ,
तुम्हारा हृदय स्वयं ही,
इसका स्त्रोत है,
जिससे बहता है,
वह निर्बाध, निरन्तर,
जब तक तुम उसका
रूख मोड़ ना दो ।

सन्त का निर्मल हृदय,
कब बंधता है नियमों से,
वह तो तत्काल द्रवित हो जाता है,
मानव और प्रभु के प्रेम से ।

ईश्वर एक मृग मरीचिका है,
हर क्षण जो तुम्हें घेर रहा,
जब तक तुम उसको नहीं देखते,
अपने चहूं ओर
और बन्द कर देते हो पूछना,
कौन, क्या और क्यों ?

भटक लिया वह बहुत,
सारी पृथ्वी जो घूम लिया,
अपने अन्तर में जिसने लेकिन,
कभी नहीं प्रवेश किया ।

मैं मृत्यु से भयमुक्त हो गया,
क्योंकि मृत्यु, तो आनी ही है,
इसलिए इच्छाओं से उपर उठकर,
मैने ' अहम' को मार दिया ।

महान है वह मृत्यु,
जिसमें नवजीवन का अंकुर हो,
सार्थक है वह जीवन
जिसने मृत्यु में जन्म लिया हो ।

'बंधन और मुक्ति'

जंजीर बनी हो सोने की
या फिर वह हो लोहे की
दोनो ही बंधनकारी हैं,
शुभकर्मों का फल हो,
या दुष्कर्मों का फल हो,
जिसने ये बंधन तोड़ दिए
वो ही सच्चा 'ब्राह्मण' है,
उसने ही सत्य को जाना है ।

जब अहम छूट चुका हो,
सब तर्क भी चूक गए हों,
तब आता है वक्त,
अनजाने उपहार पाने का ।

तुम्हारे स्वयं के 'मैं' के सिवाय,
किसने तुमको बांधा है,
जब तक इससे ना मुक्त हुए,
क्या तुमने साधा है ?

चहे हजारों जंजीरों से कोई मुझको बांध भी ले,
फिर भी बंधन हीन रहूंगा,
क्योंकि हरदय मुक्त हूं मैं ।

जिसने कहा मुक्त है वह
इच्छाओं से आशाओं से,
उसने ही यह सिद्ध किया,
भटक रहा है वह भ्रम में ।

जैसे जैसे मैं रिक्त हो रहा,
अपने अहं से मुक्त हो रहा,
लगता है मुझको ऐसे कि,
प्रभु को मैं पहचान रहा ।

'**रहस्य**'

आकार ही निराकार है,
निराकार ही आकार
आकार कुछ नहीं है 'आकार' के सिवाय
और आकार कुछ भी नहीं है निराकार के सिवाय,
निराकार के बाहर कोई आकार नहीं है,
और आकार के बाहार निराकार नहीं । ' नागार्जुन'

लघु से लघुतम भी
उतना ही बड़ा है जितना अनन्त,
और अनन्त उतना ही छोटा है,
जितना लघु से भी लघुतम,
सीमांए आधारहीन हैं,
और कोई भी आंख
नहीं देख सकती सीमाओं को । 'सेंगत्सन'